मैं बावा मंगलदास

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

मनुष्य दूसरों के विषय में अधिक जानकारी रखता है किन्तु अपने को जानने का प्रयास नहीं करता। इस संसार में माया जाल के बंधनों में अपने को बांधे रखता है। सम्बन्धों के जाल में फसकर वह अपना जीवन नष्ट कर देता है। जिसके सम्बन्धों का तन्तु जितना घना होता है उसका बन्धन उतना मजबूत होता है। मंगलदास रूपी मन, वचन और काया की प्रवृत्ति कर्मों के भुगतान के लिए है। मंगलदास को जन्म देने वाला बावा अर्थात राग–द्वेष है। पूर्वजप्प्म में भाव कर्मों का बंधन किया है वही इस जन्म में मंगलदास रूपी पुतला बनकर कर्मों को भुगत रहा है। राग–द्वेष के कारण शरीर आत्मा का सम्बन्ध जुड़ता है। जीवनभर बहुत से भाव इकट्ठे किये जाते हैं वही कार्मण शरीर बन जाता है।

उदय और प्रारब्ध के अनुसार जीवनभर जीव को दुःख और सुख मिलते रहते हैं। कर्मों का घेरा बड़ा मजबूत होता है। घाती और अघाती कर्म जीव को कर्मों के बंधन में डाल देते हैं। ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय कर्म घाती कर्म है। आयुष्य, वेदनीय, नाम और गौत्र अघाती कर्म है। इन कर्मों के कारण भव–भवान्तरों में जीव को भटकना पड़ता है। कर्मों का भोग सभी प्राणी को प्राप्त होता है। भाव एक आंतरिक चिन्तन होता है। भाव के माध्यम से ही मनुष्य के स्वरूप को जाना जा सकता है। मानव में आत्मा रोम–रोम में समायी है। आत्मा के द्वारा चैतन्य का विकास होता है। मनुष्य एक चिन्तनशील प्राणी है। प्रतिक्षण वह कुछ न कुछ सोचता और विचारता रहता है। इसी के माध्यम से पुण्य और पाप का भी अर्जन होता रहता है।

आत्मा और शरीर के संयोग से जो चिंतन निकलता है वह भाव है। आत्मा का भाव अच्छा भाव है और कार्मण शरीर का भाव ठीक नहीं होता। भाव को लेश्या के माध्यम से व्यक्त किया गया है। लेश्याएं छः है– कृष्ण, नील, कापोत, तेज, पद्म और शुक्ल। इनमें प्रारंभ की तीन लेश्याएं अप्रशस्त है और बाद वाली तीन लेश्याएं प्रशस्त लेश्या कहलाती हैं। जैसे भाव आते हैं वैसे ही लेश्याएं हो जाती हैं। लेश्या एक बहुत बड़ा कारखाना है। कषाय की तरंगे और कषाय की

शुद्धि होने पर आने वाली चैतन्य तरंगे– इन सब तरगों का भाव के सांचे में ढालना, भाव के रूप में इनका निर्माण करना, और उन्हें विचार तक, वाणी तक, क्रिया तक पहुंचा देना, यह इसका काम है। सूक्ष्म शरीर और स्थूल शरीर के बीच में संपर्क–सूत्र का कार्य लेश्या करती है। अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के जो स्राव हैं, कर्मों के स्राव से प्रभावित होकर निकलते हैं। कर्मों के स्राव भीतर से आते हैं और लेश्या के द्वारा गन्थियों में आकर वे सारे व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं। मनुष्य का सारा व्यक्तित्व उससे निर्मित होता है।

प्राणी न शुद्ध अर्थ में आत्मा है और न शुद्ध अर्थ में जड़ पदार्थ। यह चैतन्य और पदार्थ का योग है। आत्मा का लक्षण है चैतन्य। पदार्थ का लक्षण है–वर्ण, गंध, रस, और स्पर्श। प्राणी का आभामंडल दो प्रकार की ऊर्जाओं के संयुक्त विकिरण से बनता है–एक चैतन्य द्वारा प्राण–ऊर्जा का विकिरण और दूसरा भौतिक शरीर द्वारा विद्युत् चुम्बकीय ऊर्जा का विकिरण। प्राण ऊर्जा के विकिरण का आधार है–व्यक्ति की भावधारा। भाव चैतसिक है और आभामंडल पौद्गलिक है, फिर भी भाव और आभामंडल परस्पर प्रगाढ़ सम्बन्ध रखते हैं। आभमंडल किसी एक रंग का नहीं होता। उसमें अनेक रगों का मिश्रण होता है, क्योंकि उसका निर्माण लेश्याओं के आधार पर होता है। लेश्या के रंग व्यक्ति के भाव पर निर्भर रहते हैं। जिस व्यक्ति में जिन भावों की प्रधानता होती है, वैसे ही लेश्या के रंग हो जाते हैं। अच्छे भाव दीप्तिमय होते हैं और बुरे भाव मलिन। चित्त नाड़ी–संस्थान में क्रियाशील रहता है और उसका मुख्य केन्द्र है–मस्तिष्क। वह अन्तर्जगत् में सूक्ष्म चेतन से जुड़ा हुआ हैं। वहीं से उसे गतिशीलता के आदेश–निर्देश प्राप्त होते रहते हैं। बाह्य जगत् में वह अपने प्रतिबिम्बभूत आभामंडल से जुड़ा हुआ होता है।

लेश्या के शोधन के द्वारा जीवन में धर्म सिद्ध हो सकता है। जब कृष्ण नील और कापोत ये तीन लेश्याएं बदल जाती हैं और तैजस, पद्म और शुक्ल ये तीन लेश्याएं अवतरित होती हैं, तब परिर्वतन घटित होता है। लेश्याओं के शोधन के बिना जीवन नहीं बदल सकता। धार्मिक होने का अर्थ ही है कि परिवर्तन की यात्रा पर चल पड़ना,रूपांतरण की ओर प्रस्थान कर देना। यहॉ से तैजस लेश्या की यात्रा शुरू हो जाती है, अध्यात्म की यात्रा शुरू हो जाती है।

जब तैजस लेश्या की यात्रा प्रारम्भ होती है, तब आध्यात्म के स्पन्दन जग जाते हैं। जब आध्यात्म के स्पन्दन जागते हैं, परिवर्तन अपने आप शुरू हो जाता हैं।

रासायनिक परिवर्तन का सबसे बड़ा सूत्र है–ध्यान। चैतन्य केन्द्रों पर ध्यान और लेश्या–ध्यान के द्वारा भीतरी रसायनों में आश्चर्यजनक परिवर्तन होता है, भाव–संस्थान में परिवर्तन होता है और लेश्याओं में परिवर्तन होता है। लेश्या–ध्यान से ग्रन्थियां शुद्ध होने लगती हैं, लेश्याएं शुद्ध होने लगती हैं, तब अध्यवसाय शुद्ध होने लगते हैं। जब अध्यवसाय शुद्ध होते हैं, तब कषाय के तीव्र विपाक नहीं आ सकते, वे मन्द हो जाते हैं। मन्द विपाक वासना या बुरी आदत का निर्माण नहीं कर सकता।